ISSN 0975-850X

अनुसंधान

(त्रैमासिक शोध पत्रिका)

अक्टूबर-दिसम्बर 2013

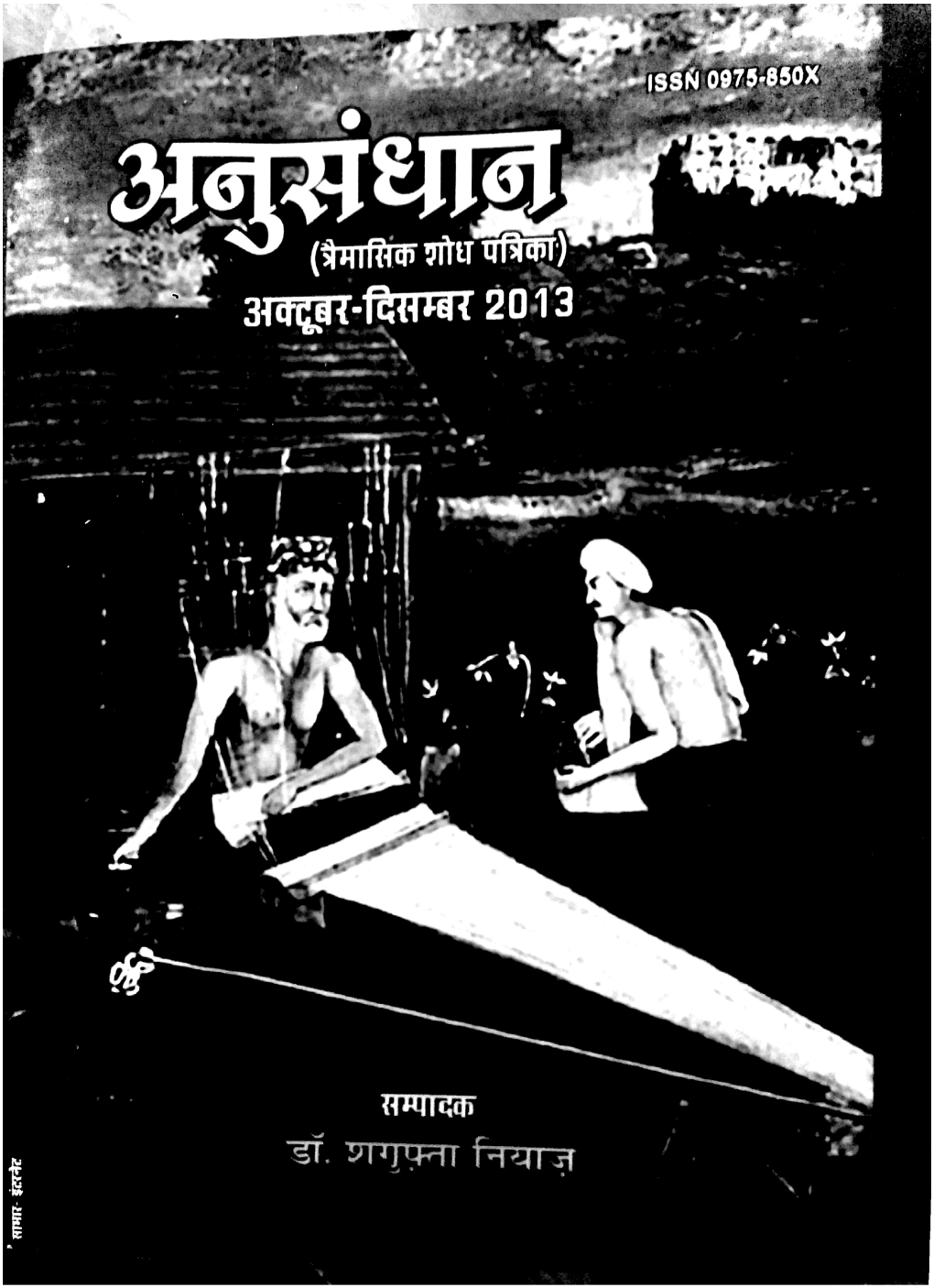

सम्पादक

डॉ. शगुफ़्ता नियाज़

साभार: इंटरनेट

Scanned by CamScanner

ISSN 0975-850X

अनुसंधान शोध त्रैमासिक

अक्टूबर –दिसम्बर 2013

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा से सहयोग प्राप्त
मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली

सम्पादक
डॉ. शगुफ़्ता नियाज़
असि. प्रोफेसर हिन्दी,
वीमेन्स कॉलेज,
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

सलाहकार सम्पादक
डॉ. एम. फ़ीरोज़ अहमद
हिन्दी विभाग,
हलीम मुस्लिम पी. जी. कॉलेज,
चमनगंज, कानपुर
09044918670

परामर्श मण्डल
प्रो. रामकली सराफ (बी. एच. यू.)
मूलचन्द सोनकर (वाराणसी),
डॉ. मेराज अहमद (अलीगढ़)

सहयोग राशि :
एक प्रति : 40/– रु., वार्षिक शुल्क संस्थाओं के लिए : 220/– रु., द्विवार्षिक शुल्क संस्थाओं के लिए : 380/– रु., आजीवन सदस्य : 1500/– रु., संस्थाओं के लिए आजीवन : 2,000/–

Scanned by CamScanner

सह–सम्पादक :
विनीत कुमार (अलीगढ़),
सलीम मुजावर, फोन-9480781006

कानूनी सलाहकार :
एम. एच. खान, एडवोकेट(हाईकोर्ट, इलाहाबाद)
एम. ए. खान, एडवोकेट(हाईकोर्ट, इलाहाबाद)
डॉ. संजय सिंह, एडवोकेट(अलीगढ़)

सम्पादन सहयोग :
यूसुफ अली (अलीगढ़)

सम्पादन/संचालन :
अनियतकालीन, अवैतनिक और अव्यावसायिक।
रचनाकार की रचनाएँ उसके अपने विचार हैं।
रचनाओं पर कोई आर्थिक मानदेय नहीं दिया जाएगा।
लेखकों, सदस्यों एवं मित्रों के आर्थिक सहयोग से पत्रिका प्रकाशित होती है।
उनसे सम्पादक-प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।
किसी भी विवाद के लिए न्याय क्षेत्र अलीगढ़ होगा।

शुल्क भेजने का पता :
मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट : डॉ. शगुफ़्ता नियाज़ के नाम
205- ओहद रेजीडेंसी, नियर पान वाली कोठी, दोदपुर रोड, सिविल लाइन, अलीगढ़-202002

डॉ. शगुफ़्ता नियाज़ की ओर से डॉ. शगुफ़्ता नियाज़ द्वारा प्रकाशित, डॉ. शगुफ़्ता नियाज़ द्वारा मुद्रित तथा रुचिका प्रिंटर्स दिल्ली में मुद्रित एवं *बी-4, लिबर्टी होम्स, अब्दुल्लाह कॉलेज रोड, अलीगढ़-202002* से प्रकाशित।

Scanned by CamScanner

अनुक्रम

सम्पादकीय/3

प्रकाश
हिन्दी के महत्त्वपूर्ण प्रेम कवि: अशोक वाजपेयी/6

यशपाल सिंह रावत
हिन्दी कथा : उद्‌भव, परिभाषा एवं स्वरूप/11

आकाश वर्मा
नचिकेता का स्त्री विमर्श/17

डॉ. विनीता शुक्ला
रीतिकालीन समाज में नारी/20

डॉ. गीता सिंह
नारी की मुक्ति/24

डॉ. अमित शुक्ल
दलित साहित्य और साहित्यकार : एक विवेचनात्मक विश्लेषण/28

डॉ. सफराम्मा तिरूनेलवेली
प्रेमचंद एवं बामा की कहानियों में दलित/35

विनीता त्यागी
हबीब तनवीर के नाटकों के संवादों में लोकरंग और बिम्ब योजना/38

डॉ. मंजरी गुप्ता
नरेश मेहता की काव्य दृष्टि/43

मोहम्मद साजिद मजीद
हिंदी उपन्यासों में ग्रामीण यथार्थ/49

प्रा. बाबासाहेब माने
एक ज़िंदगी ऐसी भी/52

अनीता आर्या
महादेवी के काव्य में दार्शनिक चिंतन/56

अफजाल अहमद
हिन्दी सूफी काव्य में प्रयुक्त कथानक रूढ़ियाँ/58

विकास कुमार
महादेवी के काव्य में रहस्यानुभूति/61

निर्मला देवी
विरक्ति और वैराग्य के विरोध के संदर्भ में हजारी प्रस
द्विवेदी का साहित्य/64

जाविद अली
नज़ीर अकबराबादी की धार्मिक चिंतनधारा/66

संगम वर्मा
मनोहर श्याम जोशी के उपन्यासों की व्यंग्यात्मकता/

माला कुमारी
मेरी भव बाधा हरो में : परम्परा और स्त्री विमर्श/7

श्रीमती वनदेवी दु. हुच्चण्णवर
नरेन्द्र मोहन : व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व/75

Scanned by CamScanner

एक ज़िंदगी, ऐसी भी

('नियतिहीनता' के विशेष संदर्भ में)

प्रा. बाबासाहेब माने

अनुवाद की प्रक्रिया प्राचीन काल से हमारे साहित्य में चली आ रही है। इस प्रक्रिया के कारण हमें भिन्न-भिन्न देशों का सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक ज्ञान मिलता है। अनुवाद से ही हम दुनिया के अनेक देशों के भिन्न-भिन्न स्थानों एवं वहाँ स्थित समाज के रीति-रिवाज, परंपराएँ, कानून तथा समाज पर हो रहे अन्याय-अत्याचारों से परिचित होते हैं। अनुवाद की प्रक्रिया वैसे तो प्राचीन काल से चली आ रही है, किंतु समकालीन युग में विश्व एक 'ग्लोबल विलेज' बनने के कारण यह तेज गति से बढ़ी हुई दृष्टिगोचर होती है। आज अनेक देशों की कहानियों, उपन्यासों एवं कविताओं का हिंदी में बड़ी मात्रा में अनुवाद हो रहा है। इसी की एक कड़ी डॉ. इंदु मजलदान द्वारा अनुदित उपन्यास 'नियतिहीनता' है। यह कृति 'इमरै कैरतेस' ने हंगरी भाषा में लिखी है। हंगारी भाषा में इसका शीर्षक है 'SORSTALANSAG' अर्थात् 'सॉर्टलनसग' है। इमरै कैरतेस का जन्म 9 नवम्बर, 1929 को 'बुदापैश्त में 'यहूदी' परिवार में हुआ था। मात्रा पंद्रह वर्ष की आयु में सन् 1944 में उन्हें 'ऑशवित्स' और उसके बाद 'बुखैनावॉल्द' के कॉन्सैंट्रेशन कैंप में भेज दिया गया था। सौभाग्य से एक वर्ष बाद ही सन् 1945 में एलाइड सेनाओं ने इस यहूदी कैंपों में बचे हुए लोगों को आज़ाद किया था। इन कैंपों में मिले अनुभवों को इमरै कैरतेस ने यथार्थता एवं मार्मिकता के साथ इस उपन्यास में अंकित किया है। जिसे पढ़कर ऐसा महसूस होता है कि यहूदियों की हालत नाजीवाद के चंगुल में सचमुच ही खतरनाक थी। यहूदियों को बहुत ही बेरहमी से सताया जाता था। उन्हें कॉन्सैन्ट्रेशन कैंपों में एक से एक भयानक समस्याओं का सामना करना पड़ता था। इन समस्याओं को मजबूरन झेलने के बाद जीवन जीने की आदमी की प्रवृत्ति विकृति में बदल जाती थी। इसका वास्तविक ज्ञान हमें इस उपन्यास के द्वारा मिलता है। यह उपन्यास इमरै कैरतेस का प्रथम उपन्यास है। किंतु यह उपन्यास, उपन्यास कम आत्मकथा अधिक लगता है। चूँकि इसमें आत्मकथात्मक शैली का अधिक प्रयोग किया गया है। इसे साहित्य के सर्वोत्तम पुरस्कार 'नोबेल' से 2002 ई. में नवाजा गया है। इसमें जीवन के अनेक गहन एवं गंभीर विषयों का ज्ञान है। इस संदर्भ में इंदु मजलदान ने स्वयं लिखा है कि "कैरतेस का पहला उपन्यास नियतिहीनता, जो उनके स्वयं के कॉन्सैंट्रेशन कैंप के अनुभवों पर आधारित उपन्यास है।"[1] यह कृति हंगरी भाषा में सन् 1975 में प्रकाशित हुआ है। इसका रूप तो आत्मकथा का है, परंतु यह मात्र आत्मकथा से कहीं बढ़कर जीवन के कई गहन विषयों के बारे में बात करता है।

इस उपन्यास में यहूदियों पर लगाए गए खतरनाक कानूनों को भी लेखक ने अपनी आपबीती के साथ विस्तार से बताया है। हिटलर की नाजीवादी प्रवृत्ति ने यहूदियों पर अनेक बुरे कानून लाद दिए थे। उन्हें छोटी जाति का माना जाता था। उन्हें अपने कोट या कमीज पर 'पीला सितारा' पहनना अनिवार्य था। अगर गलती से भी पीला सितारा कहीं कमीज या कोट के अंदर असावधानी से छिप जाता तो वह गैरकानूनी माना जाता था। इस अपराध के लिए उन्हें कड़ी सजा मिलती थी। पीला सितारा पहनना यहूदियों के लिए लाजमी बात हो गयी थी। लेखक ने बताया है कि "मैं कोट के बटन खोल लेता मगर फिर सोचा हल्की-सी हवा के झोंके से अगर कोट उड़ने लगा तो पीला सितारा (यह उस समय यहूदियों को पहनना लाजमी था) ढँक जाएगा और यह गैरकानूनी काम हो जाएगा।"[2] दूसरा कानून यह था कि पीला सितारा पहने हुए लोगों को रात के आठ बजे के बाद सड़क पर दिखने की मनाई थी। साथ ही उन्हें अगर कहीं ट्राम या बस में यात्रा करनी है तो आखिरी सीट पर बैठकर ही यात्रा करना ज़रूरी था। तीसरा कानून यह था कि उन्हें शहर के बाहर जाने की भी मनाई थी। दूसरा विश्व-युद्ध छिड़ चुका था जिसकी वजह से अनेक नए-नए कानून भी यहूदियों पर लाद दिए गए थे। इस संदर्भ में लेखक कहते हैं कि "अक्सर हवाई जहाज बम गिराने आने लगे थे शहर पर और साथ ही लाने लगे थे यहूदियों के लिए नए-नए कानून।"[3] चौथा कानून उन्हें फैक्टरियों में काम करते समय अगर गर्मी भी हो रही हो तो कपड़े उतारने की मनाई थी। चूँकि पीला सितारा

Scanned by CamScanner

कपड़ों के साथ न उतरे। ऐसे अनेक कानूनों को यहूदी लोग हिटलर के जमाने में मजबूरन झेल रहे थे।

यहूदियों को हिटलर के नाजीवादी कॉन्सैन्ट्रेशन कैंप में जबरदस्ती भेज दिया जाता था। इसके लिए वहाँ की मिलटरी और पुलिस भी काम कर रही थी। लेखक के पिताजी को भी लेबर-कैंप में भेज दिया गया था। लेबर और अन्य कैंपों में निरापराध लोगों को कैदियों के साथ ही रखा जाता था। वहाँ उन्हें अनेक प्रकार के कष्टदायी काम करने पड़ते थे। अन्न और पानी भी समय पर नहीं दिया जाता था। अन्न एवं पानी के लिए उन्हें बहुत ही तरसना पड़ता था। समय-समय पर गाली-गलोच एवं मार भी खानी पड़ती थी। पानी एवं अन्न के अभाव में अनेक लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था। इस उपन्यास का मुख्य पात्र 'कैविशत्यर्द' (कवैश दृयर्द्य) जो स्वयं लेखक है, को भी इन कैंपों में काम करते अन्न एवं पानी के अभाव में अनेक बीमारियों से ग्रसित होना पड़ा था। लेकिन वह डॉक्टरों के उपचारों एवं अपने कैंप के साथियों की मदद से अपनी ज़िंदगी बचाने में सफल हो गया था। लेखक पंद्रह साल तक अपने पिता एवं सौतेली माँ के साथ खुशी-खुशी अपने परिवार में रह रहा था। किंतु उसके पिता को मजबूरन लेबर-कैंप में जाना पड़ा और उसके बाद उसे भी जबरन कॉन्सैट्रेशन कैंप में भेज दिया गया। जब लेखक ऑशवित्स कैंप में पहुँचा तब से उसे अनेक अनुभव प्राप्त होने शुरू हुए, जो बहुत ही तकलीफदेह थे। लेखक जिस जोश एवं उमंग के साथ कैंप गया था। वापस आने तक उसका सारा जोश एवं उमंग खत्म हो गयी थी। वह मृत्यु से संघर्ष करने के लिए मजबूर बन गया था।

नाजी के विभिन्न कैंपों में यहूदियों के लिए जबरन जाना पड़ रहा था। लेबर-कैंपों में जाने वाले यहूदियों के प्रति वहाँ के उच्चभ्रू समाज में अनेक प्रकार की धारणाएँ थीं। कई लोग मानवतावश सहानुभूति प्रकट कर रहे थे तो कईयों के मन में पहले जैसे ही घृणा थी। जब लेखक के पिताजी लेबर-कैंप के लिए जा रहे थे। उस वक्त उनकी ज़रूरतों की चीज़ें लाने के लिए लेखक, उनकी सौतेली माँ और पिताजी एक दुकान पर चले गये थे। दुकानदार चीज़ें माँगने के बाद ही समझ गया था कि ये चीजें लेबर-कैंप में ज़रूरी होती हैं। साथ ही उसे यह भी पता था कि लेबर-कैंप में जाने के बाद शायद ही कोई बचकर वापस आता है। इसलिए दुकानदार उनके साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार कर रहा था। इसके विपरीत दूसरा है 'नानबाई' जो यहूदियों के लिए राशन बाँटता है। उसे यहूदियों से बहुत ही घृणा है। लेखक जब दुकान में रोटी का राशन लाने जाता है तो उसे यह नानबाई तिरस्कार की दृष्टि से देखने लगता है और बुरी तरह से पेश आता है। साथ ही जितना राशन देना था उससे कम ही राशन दे देता है। उसके इस बेरुखे व्यवहार को लेखक ने यूँ बयान किया है-"नानबाई ने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया, पास-पड़ोस के सभी लोग जानते थे कि वह यहूदियों से घृणा करता था। इसीलिए उसने मेरे लिए कुछ कम ही रोटी तौली।"[4] दूसरे विश्व युद्ध के पहले हिटलर के जुल्मों के शिकार अनेक यहूदी लोग हो रहे थे। इन जुल्मों के कारण उनकी मंशा यहाँ तक पहुँच गयी थी कि उन्हें अपने घर के सामान की ही नहीं, बल्कि ज़िंदगी की भी कोई गारंटी महसूस नहीं हो रही थी। लेखक के पिताजी अपनी दूसरी पत्नी यानी लेखक की सौतेली माँ को भरोसा दिलाते हुए कहते हैं- "न सिर्फ दुकानदारी में बल्कि ज़िंदगी की किसी चीज़ में आजकल कहीं कोई गारंटी नहीं है, ज़िंदगी की खुद की भी नहीं।"[5] इस कथन से स्पष्ट है कि यहूदियों को नाजी के चंगुल में फँसी ज़िंदगी अनिश्चित सी नज़र आने लगी थी। कई लोग अटकले भी लगा रहे थे कि अब जर्मन अपनी स्थिति को समझ गए हैं। वे बुदापैश्त के यहूदियों को बड़े काम के मान रहे हैं ताकि सोवियत के खिलाफ लाभ उठाने में कारगर सिद्ध हो। साथ ही लोगों के मन में यह भी वास्तविकता भर गयी थी कि 'अंतर्राष्ट्रीय मार्केटिंग' में वे वास्तव में हथियार बन गए हैं। इस प्रकार की कई अटकलें तत्कालीन समाज में लगाई जा रही थीं। लेखक ने इस उपन्यास में अपने जीवन के साथ-साथ वहाँ के समाज में स्थित अनेक धारणाओं को भी स्पष्ट रूप से अंकित किया है।

प्राचीन काल से हो रहे अत्याचारों के कारण यहूदी लोगों की मानसिकता बदल चुकी थी। वे अपने भाग्य को ही कोसते रहते थे। उन्हें अपने जीवन में केवल ईश्वर ही एकमात्र रक्षक नज़र आने लगा था। लेखक के पिताजी जब लेबर-कैंप के लिए गए थे, उस वक्त लेखक उनकी सलामती के लिए हररोज प्रार्थना करते रहते थे। इस संदर्भ में वे बताते हैं कि "लॉयोश अंकल का कहना है कि प्रार्थना रोज चलती रहे ताकि आगे भी यूँ ही परमात्मा उनकी रक्षा करते रहें, क्योंकि हम सबका रक्षक एक केवल वही तो है।"[6] लेखक का 'कवैश जॉर्ज सहायक जवान' के रूप में काम के लिए चयन होता है। इसको चलाने में मिलटरी संगठन का हाथ है। इसलिए लेखक के साथ पंद्रह वर्ष की आयु वाले अठारह बच्चों को भर्ती कर लिया गया। इस काम के लिए जब लेखक एक दिन निकला तो अचानक उनकी बस को पुलिसवालों ने रोक लिया। लेखक और उनकी बस में बैठे सभी यहूदी युवाओं को जबरन नीचे उतारकर पहले उन्हें 'कस्टम हाउस' की ओर ले जाया गया और उसके बाद 'ऑशवित्स' कैंप में भेज दिया गया। यही से लेखक के जीवन की असली परीक्षा शुरू हुई। यहाँ जाते समय उन्हें रात के

Scanned by CamScanner

समय घोड़ों के अस्तबल में रहने के लिए जगह दी गयी। ट्रेन में बिठाकर तथा कई मील पैदल चलाकर उन्हें इस कैंप में लाया गया। उस समय इन्हें खाने के लिए अनाज दिया गया था, किंतु पीने के लिए पानी की कमी महसूस हो रही थी। यहाँ आने के बाद उन्हें ईंटों के कारखानों में काम करना पड़ रहा था। जहाँ जवान, बड़े-बूढ़े, औरतें और हर उम्र के बच्चे भी थे। वहाँ लेखक को अनेक लोग मिलते हैं, जो लेखक की तरह ही बंदी बनाये हुए थे। वहाँ बंदी एक आदमी जो अपनी माँ के लिए दवाइयाँ लेकर घर जा रहा था। वे दवाइयाँ वैसे ही उसके बैग में थी। जब यहाँ के पुलिसवालों ने उसके रकसैक पर छापा मारा तो उसमें दवाइयाँ और खाने-पीने की चीज़ों को देख वे बहुत क्रोधित हो उठे। उन्होंने इस सामान को कालाबाज़ारी लाया हुआ सामान घोषित किया और उस आदमी की खूब पिटाई की। जिससे उसका चेहरा सूज गया और रंग-विरंगे जख्मों से भर गया। उस समय "वह व्यर्थ ही समझता रहा कि यह सब पुराने स्टॉक का बचा-खुचा सामान है और केवल उसकी बीमार माँ के लिए है, पर वे यही आरोप लगाते रहे कि उसका काले बाज़ार के धंधें में जरूर कुछ हाथ है।"[7] इस प्रकार के कई आरोप यहाँ के यहूदियों पर लगाकर उन पर अन्याय-अत्याचार किया जा रहा था। अगर किसी के पास कीमती समान या सोने तथा चाँदी के जेवरात होते तो उन्हें भी मिलटरी पुलिसवाले निकाल कर ले लेते थे। यानी इन लोगों के पास कुछ न बचे ताकि ये किसी को इन जेवरातों का लालच देकर भाग न निकले।

ऑशवित्स में लेखक की प्रताड़ित ज़िंदगी का सिलसिला शुरू हो गया था। यहाँ लेखक ने केवल तीन दिन ही बिताए थे, किंतु इन तीन दिनों में लेखक और उसके साथ बंदी अनेक युवाओं, औरतों एवं बुजुर्गों को अनेक प्रकार की तकलीफों को झेलना पड़ा था। यहाँ खाने के लिए केवल एक रोटी का टुकड़ा और उसके साथ मार्जरीन मिलता था। सुबह नाश्ते के समय जो सूप मिलता था। उसे पीने की इच्छा भी नहीं होती थी। इतना खराब सूप उन्हें दिया जाता था। 'ऑशवित्स' की खाने की पद्धति के बारे में लेखक बताते हैं कि "ऑशवित्स में खाने का सिस्टम काफी चकराने वाला था। सुबह जल्दी से कुछ पीने को मिल जाता था, जैसे कॉफी। नौ बजे तक सूप आ जाता था जो दिन का खाना भी होता था। उसके बाद काफी देर तक कुछ नहीं, शाम को गोधूलि के समय तक, तब रोटी मिलती थी मार्जरीन के साथ हाजरी से पहले और इस प्रकार तीसरे दिन तक मैंने अपनी अत्यधिक भूख की पीड़ा से समझौता कर लिया था।"[8] सुबह-सुबह उन्हें ठंड में ही जगाया जाता था और केवल सूप देकर काम में जुटाया जाता था। सीमेंट की बारियाँ एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना, ईंटों को ढोना, सीमेंट की टोकरियाँ भरना इत्यादि काम इनके द्वारा करवाये जाते थे। ऐसी अवस्था में लेखक और उसके साथियों को मुश्किल से अपना जीवन गुज़ारना पड़ रहा था। अगर कोई आदमी किसी काम में ढ़िलाई बरतता या अनायास ही किसी के द्वारा काम में कोई गड़बड़ी होती तो उसे वहाँ के मिलटरी वालों की मारपीट का शिकार होना पड़ता था। ये लोग बाहर न जाए इसलिए उनके बैरेक के चहुँ ओर जो बाढ़ लगाई गयी थी और उसमें करंट छोड़ दिया जाता था। इसी तरह के अन्यायों के कारण यहाँ मरने वाले लोगों की तादाद दिन-ब-दिन बढ़ने लगी थी। एक तो उन्हें समय पर खाना नहीं मिलता था और जो मिलता था तो वह एकदम खराब रहता था, जिसे खाने का मन भी नहीं करता था। दूसरा किसी तरह से पेट भरने के लिए वह अन्न अगर गले के नीचे उतार भी दें तो पीने के लिए पानी भी नहीं मिलता था। तीसरा ऊपर से जी-तोड़ मेहनत करनी पड़ती थी सो अलग। परिणामस्वरूप पेचिश या अन्य कई बीमारियों से लोग तुरंत ही मर जाते थे।

यहाँ के बाद लेखक और उसके साथ बंदी बनाए लड़कों को 'बुखैनवॉल्द' के कॉन्सैंट्रेशन कैंप में लाया गया। यहाँ के हालात तो उससे भी बद्दतर थे। इन हालातों में भी लेखक किसी-न-किसी रूप में जीवित रहना चाहता था। यहाँ पर सभी लोगों का परीक्षण किया गया था और उन्हें तिकौने कपड़े पर यू अक्षर बना कपड़ा दिया गया था। जो हंगरी का प्रतीक था। यहाँ पर सभी लड़कों को कैदियों की तरह ही नम्बर दिये गये थे। लेखक को भी यहाँ नंबर मिला था। जो नम्बर 64921 था। अब उन्हें नाम बताने की इजाज़त नहीं थी, केवल नंबर बताना ही ज़रूरी था। यहाँ लेखक और उनके साथियों को रहने के लिए एक छोटा-सा टेंट दिया गया। सोने के लिए जगह बहुत तंग थी, फिर भी उसमें किसी तरह से सोना पड़ रहा था। भूसे से भरे हुए बिस्तरों पर सोना पड़ रहा था। यहाँ के प्रबंध के बारे में लेखक ने बताया है कि "कँटिली बाढ़ यहाँ से दूर भी थी और उस पर बिजली का करंट भी नहीं दौड़ रहा था। मगर जो रात को यूँ ही टैंट के बाहर कदम निकालेगा उसे शिकारी कुत्ते चीरकर रख देंगे ऐसी चेतावनी दी गयी थी।"[9] इस कैंप के बाद 'जाइत्स' नामक स्थान के कैंप में लेखक और उसके बचे हुए साथियों को ले जाया गया। जाइत्स में भी काम के बारे में वही हालात थे। हररोज काम करना पड़ता था। अगर काम ठीक से नहीं हुआ तो सजा मिलती थी। यहाँ पर इतना काम करना पड़ता था कि कइयों को अनेक बीमारियाँ घेर लेती थीं। इस संदर्भ में लेखक बताते हैं कि "वह काम के पहले रोज की दोपहर थी। एक मालगाड़ी के डिब्बे में रोड़ी भरने का काम

Scanned by CamScanner

था।....कुछ देर बाद मेरी हथेलियों में जलन-सी महसूस होने लगी, मैंने देखा उँगलियों के नीचे की जगह खूनाखून हो रही थी।''[10] ....बद्दतर हालत में लेखक ने जीवन संघर्ष किया था। इस बद्दतर हालत का शिकार केवल लेखक ही नहीं था, बल्कि वे पूरे यहूदी कैदी या उन्हें बंदी कहा जा सकता है, जो अलग-अलग देशों के तमाम लोग थे, जिनको नाजीवादी विकृति ने शिकार बनाया था। इन कैंपों में हंगरी, चैक, जर्मन, पोलैंड, स्लोवाक, यूक्रेनिया और सोवियत रूस के यहूदियों को कैदी बनाकर रखा गया था। इनमें से कइयों ने अपनी ज़िंदगी की अंतिम सांस इन्हीं यातनाओं को सहते हुए छोड़ दी थी और कई अंत तक संघर्ष करते हुए जीवन जी रहे थे। यहाँ पर काम करने के लिए जो कपड़े एवं जूते दिए गये थे। वे तो बिल्कुल ही खराब थे। काम करते समय कपड़ों से ज्यादा गर्मी महसूस होती थी। साथ ही जूतों से पाँवों में कई प्रकार की बीमारियाँ फैलती थी। इसी का हाल बताते हुए लेखक ने लिखा है कि ''इन जूतों ने, कम से कम मुझे, बहुत परेशान किया था। आमतौर पर अपने कपड़ों से, जो हमें कॉन्सैंट्रेशन कैंप में दिए गए थे, मैं संतुष्ट हो ही नहीं सकता था, उनमें कई गलतियाँ थी, और वे व्यावहारिक भी नहीं थे।''[11] लेखक केवल जीने की जीजीविषा के कारण ही जीवित रह सका था। वरना उसकी मृत्यु भी कब की हो चुकी होती, जैसे अन्यों की हो गयी थी। लेखक अपने जीने की ललक के बारे में कहते हैं- ''इसमें कोई शक नहीं की मैं जी रहा था, चाहे टिमटिमाता हुआ, चाहे जड़ तक खोखला हुए, पर मुझमें अब भी कुछ था, ज़िंदगी की लौ, जैसा कहा जाता था- या कम से कम मेरा शरीर तो था ही, इसके बारे में दावे के साथ कह सकता था, बस यह ज़रूर है कि उसमें मैं खुद कहीं नहीं था।''[12] लेखक की हालत 'जाइत्स' में बहुत ही खराब हो चुकी थी। दिन-ब-दिन उनकी तबीयत गिरती जा रही थी। वह एक कमजोर आदमी बन चुका था। अगर वह आम लोगों की तरह अपने घर परिवार में रहकर ज़िंदगी जीता तो उसे कमजोर बनने के लिए कम-से-कम पचास-साठ साल लग जाते, परंतु वह यहाँ केवल तीन महीने में ही बहुत कमजोर बन गया था। जैसे उसे लगता था कि अब उसका शरीर उसका साथ छोड़ रहा है- ''मैं कॉन्सैंट्रेशन कैंप के लिए भी यही कह सकता हूँ। वरना क्या मैं कभी सोच भी सकता था कि इतनी जल्दी मैं मुरझा कर एक बेहद कमजोर आदमी में परिवर्तित हो जाऊँगा। घर पर इसके लिए काफी समय लगता-कम से कम पचास-साठ साल। जबकि यहाँ तीन महीने ही काफी थे उसके लिए कि मेरा शरीर मुझे धोखा दे जाए।''[13] इन कैंपों की विभिन्न यातनाओं के कारण तथा अन्न एवं पानी के अभाव के कारण जब वह बीमारी से पूरी तरह से ग्रसित हो गया। तब उसे अस्पताल में भर्ती कराया गया। इस अस्पताल में प्यैत्का और बिशेक नामक नर्सिंग असिस्टेंट ने लेखक की बहुत ही सहायता की। यहाँ के डॉक्टरों और इन नर्सिंग असिस्टेंटों के माध्यम से लेखक किसी तरह से जीवित रह सका था। इसके अतिरिक्त लेखक की जीवित रहने की मुख्य बात यह थी कि उसके पिताजी ने लेबर-कैंप जाने से पहले अपनी दूसरी पत्नी यानी लेखक की सौतेली माँ की जिम्मेदारी लेखक पर सौंपी थी। इसलिए लेखक ने कैंपों की अनेक यातनाओं को सहन करते हुए जीवित रहने का सफल प्रयास किया था। बाद में जब एलाइड सेना के माध्यम से अन्य यहूदियों के साथ लेखक को भी आज़ादी मिली। तब लेखक अपने गाँव 'बुदपैश्त' में वापस आया तो उसे पता चला कि उसके पिताजी ऑस्ट्रिया के लेबर-कैंप में मर गए हैं और सौतेली माँ ने दूसरा विवाह कर लिया है। उस समय लेखक की जीवन जीने की पूरी तमन्ना ही खत्म हो जाती है। लेखक की इस दर्दभरी आपबीती को देखने के बाद यह विचार अनायास ही मन में कौंदता है कि एक ज़िंदगी ऐसी भी होती है जो मुसीबतों को पार करने के बाद जीने के लिए प्रेरित करने की बजाय मरने के लिए उकसाती है। अतः ऐसी ज़िंदगी कभी किसी को नहीं मिलनी चाहिए, परंतु ज़िंदगी के प्रति लेखक में जो आत्मविश्वास भरा हुआ वही आत्मविश्वास लेखक को भविष्य की ज़िंदगी जीने के लिए प्रेरित करता है। शायद यही उद्देश्य इस उपन्यास का प्रतीक होता है।

संदर्भ-

1. नियतिहीनता-मूल लेखक-इमरे कैरतेस, अँनु. इंदु मजलदान, भूमिका, वाणी प्रकाशन, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण-2006
2. वही, पृ. 12
3. वही, पृ. 26
4. वही, पृ. 17
5. वही, पृ. 18
6. वही, पृ. 27
7. वही, पृ. 81
8. वही, पृ. 85
9. वही, पृ. 96
10. वही, पृ. 85
11. वही, पृ. 109
12. वही, पृ. 121
13. वही, पृ. 109

अध्यक्ष, हिंदी विभाग, श्रीशिव छत्रपति महाविद्यालय, जुन्नर जिला-पुणे (महाराष्ट्र)

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner